

12 क्या आत्मनियंत्रण सीखा जा सकता है, बजाय थोपने के?

यामिनी पाटिल

मेरा पक्का विश्वास है कि बच्चे सहज जिज्ञासु (सीखने की कुदरती क्षमता रखने वाले) होते हैं। वे अपने आसपास के माहौल, परिवार और बराबरी वालों की संगत से सीखते हैं। उनकी शिक्षा सिर्फ ज्ञान तक सीमित नहीं होती, बल्कि उसमें वे सामाजिक सलीके भी शामिल होते हैं जिनकी बदौलत वे अपने बराबर के लोगों के समूह के द्वारा स्वीकार किए जाते हैं और उसका हिस्सा बन पाते हैं। बेशक, हर बच्चे की जिन्दगी में ऐसे दौर आते हैं जब वह जिद्दी और झगड़ालु होता है और विचित्र व्यवहार करता है।

मेरा यकीन था कि मिलनसार होना, दूसरों की अच्छाइयों को पहचानना, आदर करना और दूसरों के साथ साझा करना कक्षा में सीखी जाने वाली चीजें हैं। मुझे लगता था कि इन चीजों को बच्चे माध्यमिक शिक्षा के समय तक आते–आते पर्याप्त मात्रा में ग्रहण कर लेते हैं और अपने समूह के साथ घुल–मिल जाते हैं।

माध्यमिक स्कूल के विद्यार्थियों के साथ के मेरे तजुरबे ने मेरे इस यकीन को हमेशा पुख्ता किया था। मैंने यह भी गौर किया था कि कारगर शिक्षण स्वच्छन्द समूहों के भीतर ही होता है।

माध्यमिक स्कूल के साथ के मेरे तजुरबे से हमेशा यह बात सामने आई थी कि स्वच्छन्द समूहों का निर्भीक वातावरण बच्चों को अपने विचारों को व्यक्त करने में, दूसरों की धारणाओं का आकलन करने में तथा उनके क्रियाकलापों के नफा–नुकसानों पर चर्चा करने में हमेशा मदद करता था, हालाँकि समूहों की भीतरी और आपसी दुश्मनियाँ भी देखने में आईं थीं। लेकिन ये इस हद तक नहीं थीं कि वे सीखने की प्रक्रिया पर बुरा असर डाल सकतीं। सदस्यों की समस्याओं का निराकरण समूह के भीतर चर्चा करके और समूहों की आपसी समस्याओं का निराकरण उन पर कक्षा में चर्चा करके किया जा सकता था। यह सिलसिला शायद इतने लम्बे अरसे से जारी था कि उसने मुझे भरोसा दिला दिया था कि इस स्थिति के कोई अपवाद नहीं होंगे। यही वजह थी कि मैंने बीमारी के लक्षणों को नजरअन्दाज कर दिया था।

यह मेरी आठवीं कक्षा के विद्यार्थियों के साथ हुआ था। मैं जानती थी कि मुझे छोटी–मोटी शुरुआती मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा क्योंकि यह कक्षा मेरे लिए नई थी। यह मेरा दस्तूर रहा था कि मैं कक्षा के पहले ही दिन इस पर चर्चा करती थी कि कौन से नियम हैं जिनका पालन जरूरी होगा। विद्यार्थियों ने खुद ही बताया कि कक्षा में किन चीजों की छूट थी और किन चीजों की नहीं थी। जब बात इस पर आई कि अगर दूसरा बोल रहा हो तो उसको बीच में न टोका जाए और उस पर फब्तियाँ न कसी जाएँ, तो बहुत से बच्चों ने दूसरा तरीका निकाला। वे एक–दूसरे की तरफ देखकर आँखें मटकाने लगे। मैंने इस पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया। मुझे देना चाहिए था!

मैंने एक महीना बीत जाने दिया ताकि विद्यार्थी नए अध्यापकों और नए पाठ्यक्रम के साथ तालमेल बिठा सकें। मैं सोचती थी कि निचली कक्षा से माध्यमिक कक्षा में जाने से विद्यार्थी निश्चय ही कुछ विचलन महसूस करते होंगे और यह



चीज उनको चंचल बनाती ही होगी। लेकिन जब दो महीने बीत जाने के बाद भी कक्षा व्यवस्थित नहीं हुई, तो मैंने यह जानने के लिए कक्षा पर नजर रखना शुरू कर दिया कि समस्या क्या है। जो चीज मुझे पता चली उसने मुझे वाकई चिन्ता में डाल दिया। कुछ विद्यार्थी वाकई खामोश रहने लगे थे, जैसे वे अपने में डूबे हुए हों। ये वे लोग थे जो शुरू में बहुत सक्रिय हुआ करते थे, लेकिन धीरे–धीरे वे अदृश्य बन गए थे। वजह यह थी कि हिस्सा लेना तो दूर की बात थी, लगता था वे अपना मुँह तक खोलने से डर रहे थे। जिस वक्त दूसरे लड़के अपने विचार व्यक्त कर रहे होते थे या सवालों का जवाब दे रहे होते थे, कक्षा के कुछ लड़के थे जो उन पर कटाक्ष करते थे। ऐसा नहीं था कि वे कुछ ही लड़कों को अपना निशाना बनाते हों। अपनी अनावश्यक टीका–टिप्पणियों से वे किसी को भी बख्शते नहीं लगते थे। कई ऐसे भी थे जो पलटकर जवाब दे देते थे, जिससे बहसबाजी होने लगती थी। कई बार ऐसा होता कि बातचीत का विषय ही पटरी से उतर जाता था। कक्षा का ज्यादातर समय इस व्यर्थ की बहसबाजी में जाया हो रहा था। उनसे निजी तौर पर बात करने का कोई फायदा नहीं था क्योंकि अपनी हरकतों से वे जिस तरह दूसरों का



ध्यान खींच रहे थे उसका वे आनन्द लेते लगते थे। उनको नजरअन्दाज करने का मतलब उनको और ज्यादा आक्रामक होने की छूट देना था।

जो कुछ चल रहा था उस पर मैंने संजीदगी से विचार करना शुरू किया। मुझे लगा कि हालात हाथ से बाहर होते जा रहे हैं। ये वे बच्चे नहीं थे जो किसी तितली का पंख नोचने में आनन्द लेते हैं। ये तो अपनी फब्तियों से दूसरों को होने वाली तकलीफ का मजा लेते लग रहे थे। लगता था जैसे उनका खुद ही अपनी हरकतों पर कोई वश नहीं था।

संयोग से, हमें अपने शैक्षणिक प्रशिक्षण के सत्र में चर्चा के लिए पॉल टॅफ़ का एक लेख दिया गया था: 'अगर कामयाबी का रहस्य नाकामयाबी हो तो?' यह लेख इस बात पर जोर देता था कि किस तरह चरित्र उतना ही अहम होता है जितनी कि प्रतिभा होती है, और उसमें शिक्षकों की दीर्घकालिक सफलता के लिए उत्साह, साहस, आत्मनियंत्रण, सामाजिक व्यवहार कुशलता; कृतज्ञता–बोध, आशावाद और जिज्ञासा जैसी शक्तियों की निशानदेही की गई थी। इस लेख में कही गई बातें मुझे अपनी इस आठवीं कक्षा के सन्दर्भ में एकदम प्रासंगिक लगीं। फिलहाल आत्मनियंत्रण मेरी प्राथमिकता थी।

मैं जानती थी कि आत्मनियंत्रण के बारे में बात करने से विद्यार्थियों पर कोई असर होने वाला नहीं था। आत्मनियंत्रण के जिक्र मात्र से वे बिदक जाने वाले थे। मुझे विद्यार्थियों को ऐसी गतिविधियों में लगाना जरूरी था जहाँ वे खुद ही आत्मनियंत्रण के बारे में सोचने लगते। कक्षा में बुक रिपोर्ट्स के बारे में चर्चा के दौरान एक छात्रा किसी कहानी के एक ऐसे पात्र का जिक्र कर रही थी जो अक्सर गुस्सा हो जाया करती थी। मैंने इस अवसर का लाभ उठाते हुए उससे पूछा कि क्या उसको उस पात्र का इस तरह गुस्सा हो जाना उचित लगता है। कुछ विद्यार्थियों को लगता था कि गुस्सा होना उसका हक था और कुछेक का मानना था कि उसको अपनी भावनाओं पर कुछ और काबू पाना चाहिए था। चर्चा के अन्त में सारे विद्यार्थी इन सवालों का जवाब देने की स्थिति में थे कि वह क्या चीज थी जिससे उनको गुस्सा आ जाता था, और अगर उन्होंने अपने गुस्से को काबू में कर लिया होता, तो क्या स्थिति बनी होती। ज्यादातर को अपने गुस्से पर काबू पाने की कोई वजह नहीं दीखती थी क्योंकि उनका ख्याल था कि गलती पूरी तरह से दूसरे की होती थी।

अगला कदम संगीत और नाटक के अध्यापकों की मदद से पूरी तरह से शारीरिक गतिविधि का था। विद्यार्थियों से कहा गया कि वे ढोलक की ताल से कदम मिलाते हुए अपने शरीर को एक खास तरह की गति में ढालें। ताल बदलने पर उनको उसके मुताबिक अपने शरीर की गति में भी बदलाव लाना जरूरी था। ज्यादातर बार ऐसा हुआ कि ताल बदलने पर उनकी गति में कोई बदलाव नहीं आया। जब सवाल उठा कि ताल का साथ न दे पाने की क्या वजह थी, तो उनको अहसास हुआ कि इसमें ढोलक की नहीं बल्कि उन्हीं की गलती थी। जब ये गतिविधियाँ जारी थीं, उसी दौरान आत्मनियंत्रण के बारे में कुछ पोस्टर प्रदर्शित किए गए। पोस्टरों की विषयवस्तु पर कोई औपचारिक चर्चा नहीं की गई थी। लेकिन बच्चे अपने समूहों में इन पोस्टरों पर चर्चा कर रहे थे।

एक सप्ताह के अन्तराल के बाद अन्तिम और सबसे अहम गतिविधि शुरू की गई। कक्षा को एक भूमिका निभाने के लिए तीन के समूहों में बाँटा गया। विषय था कक्षा में छेड़खानी। हर समूह से छेड़खानी के शिकार व्यक्ति की और एक वयस्क की भूमिका निभाने को कहा गया। विद्यार्थियों ने भरपूर उत्साह दिखाया। कुछ समूह दिलचस्प समाधानों के साथ सामने आए। ज्यादातर भूमिकाओं में, शिकार व्यक्ति छेड़खानी को लेकर काफी गुस्से से भरी प्रतिक्रिया करते हुए और वयस्क छेड़खानी करने वाले को सजा देते हुए देखे गए। लेकिन इनमें दिलचस्प भूमिकाएँ वे थीं जहाँ छेड़खानी के शिकार ने शुरुआत में छेड़खानी को नजरअन्दाज करते हुए असाधारण संयम से काम लिया, लेकिन जब इसका कोई असर नहीं हुआ तो उसने छेड़खानी करने वाले को सख्त तरीके से कह दिया कि इस तरह की हरकत बर्दाश्त नहीं की जाएगी। दिलचस्प बात थी कि इन भूमिकाओं में वयस्क सबसे अन्त में सजा देने वाले की नहीं बल्कि समझौता कराने वाले की भूमिका निभाते देखे गए। इन भूमिकाओं की समीक्षा से यह बात जाहिर थी कि इनने विद्यार्थियों को समझदार और विचारशील बनाया था।

अगले दिन जब मैं कक्षा में पहुँची तो उम्मीद से भरी हुई थी। सबसे पहले जिस बात पर मेरा ध्यान गया वह यह थी कि विद्यार्थियों का हर समूह पूरे उत्साह के साथ बहस में मशगूल था। जैसे ही मैं कक्षा में दाखिल हुई, एक सामूहिक स्वर सुनाई दिया, “अक्का, प्लीज आज कोई पढ़ाई नहीं। हम लोग कल की चीजों पर बात करना चाहते हैं।” चर्चा में जो बात सामने आई वह यह थी कि समूची कवायद बेकार नहीं गई। लगता था कि कक्षा पर उसका अच्छा खासा असर हुआ था खासतौर से उन विद्यार्थियों पर जो छेड़खानी के शिकार रहे थे। जो विद्यार्थी छेड़े जाने पर उग्र प्रतिक्रियाएँ किया करते थे, उन्होंने कहा कि वे अब ऐसा नहीं करेंगे और वे उसको नजरअन्दाज कर दिया करेंगे क्योंकि दूसरे लोगों को उन पर कटाक्ष करने से सन्तोष मिलता है। जो चुपचाप सह लिया करते थे उनका कहना था कि वे इन मवालियों को दृढ़तापूर्वक कहेंगे कि वे आगे से उनको परेशान न करें। जो सबसे अच्छा तरीका अपनाने का उन्होंने फैसला किया, वह यह था कि, खासतौर से तब जबकि कक्षा चल रही होगी, तो वे परेशान किए जाने पर अपने गुस्से का इजहार करते हुए चुपचाप अपनी कुर्सियाँ उठाकर इन खलल डालने वालों से दूर पीछे जाकर बैठ जाएँगे। उनका कहना था कि वे बहस न करके तथा व्यवधान का शिकार न होकर ही अपने आत्मनियंत्रण का परिचय देंगे। इसी के साथ, ऐसा करके वे दूसरे को इस बात का अवसर नहीं देंगे कि वे उनकी पढ़ाई में खलल डाल सकें।

क्या समस्या हल हो चुकी थी? नहीं। बच्चे तो बच्चे ही थे, कुछ खामियाँ बनी हुईं थीं। लेकिन इस पूरी कवायद ने कम से कम कुछ विद्यार्थियों को यह समझने में मदद की ही थी कि समाधान उनके हाथों में है।

टुमकुर, कर्नाटक के टीवीएस स्कूल से मुझे जो तजुरबे हासिल हुए और स्कूल ने मुझे काम करने की जो आजादी दी उसके लिए मैं उस स्कूल की शुक्रगुजार हूँ।



यामिनी *(एम. कॉम., एम. फ़िल., बी.एड) को लगभग 30 साल का अध्यापन का अनुभव है। उनका आखिरी कार्यकाल टीवीएस स्कूल, टुमकुर में काम करने का था। अँग्रेजी भाषा का अध्यापन और अँग्रेजी तथा तेलुगू साहित्य का अध्ययन उनकी रुचि के क्षेत्र हैं। इन दिनों वे अवकाश पर हैं। वे स्वतंत्र रूप से काम करती हैं और अपनी पोती, जो दूसरी कक्षा में पढ़ती है, के साथ खेलने का आनन्द लेने में अपना वक्त बिताती हैं। उनसे reddyirm@gmail.com या yaminimohanreddy@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।*
अनुवाद *: मदन सोनी*